फ़िक़्ही इख़्तिलाफ़ात की शरई हैसियत

इस्लामी शरीअत की व्याख्या करनेवाले, और उसके बुनियादी उसूलों के मुताबिक़ फ़िक़्ही रहनुमाई करनेवाले मुख़तलिफ़ गिरोहों में बहुत से वैचारिक मतभेद होते हैं, जिन्हें मसलक और फ़िक़्ह का फ़र्क़ कहा जाता है। इस इख़तिलाफ़ और फ़र्क़ की हदें क्या हैं, इनकी हैसियत क्या है और इस फ़र्क़ को किस तरह देखा जाए? इस को तय करने के लिए फ़िक़्ह अकेडमी के 12वें सेमिनार में ग़ौर किया गया है। यह सेमिनार 11-14 फ़रवरी 2000 ई॰ को उत्तर प्रदेश के बस्ती जिला में आयोजित हुआ। इस ताअल्लुक़ से निम्न प्रस्ताव पारित हुए:

1- शरई फ़िक़्ही रहनुमाई निर्देशों के दो भाग हैं: एक मन्सूस है, अर्थात वह क़ुरआन व हदीस के स्पष्ट रूप से हैं, जिन्हे प्रत्यक्ष निर्देश भी कहा जा सकता है। दूसरा भाग गैर मन्सूस है, अर्थात वह निर्देश जो क़ुरआन व हदीस के आधार पर फ़िक़्ह के इमामों ने निर्धारित किए हैं। इमामों के चिंतन और मंथन से निकले यह निर्देश भी इस्लामी शरीअत को समझने का ज़रिया हैं, और इस्लामी तालीमात का हिस्सा हैं।

2- फ़िक़्ह के आलिमों व मुज्तहिदीन अर्थात धर्मशास्त्रियों की राय में जो अन्तर और मतभेद हैं वे हक़ और बातिल (सत्य और असत्य) का मतभेद नहीं हैं। इनमें से अधिकतर मसले ऐसे हैं जिनमें श्रेष्ठ व अतिश्रेष्ठ और बेहतर व कमतर का अन्तर है। बाक़ी मसअलों में मतभेद इस बात का है कि ''कोई बेहतर राय में आशा का संदेह है और दूसरी राय में बेहतरी का है''।

3- आम आदमी जो क़ुरआन व हदीस और शरई उसूलों की समझ व जानकारी नहीं रखता, उसके लिए व्यवहारिक रूप से यही ठीक है कि वह अपने विश्वास वाले किसी प्रमाणित आलिम से शरई मामलें में मार्गदर्शन ले। वह इसी तरह शरीअत पर अमल करने वाला समझा जाएगा।

4- विभिन्न इमामों की राय पर चलने वाले समूहों और लोगों का एक दूसरे को बुरा भला कहने या उन बुज़ुर्गो की निन्दा करना, या उनके फ़िक़्ही तर्कों का मज़ाक़ उडाना हराम है और ऐसा करना एक मुसलमान के लिए दुनिया और आखिरत (परलोक) में घाटे व दुर्भाग्य का कारण है।

5- इस तरह के वैचारिक मतभेद में तत्कालीन बुज़ुर्गों और इमामों का तरीक़ा यह रहा है कि वह एक दूसरे की राय का सम्मान करते थे, उनका आदर करते थे, उनके मुक़ाम का लिहाज़ रखते थे और उनके ज्ञान व शोध का सम्मान करते थे। इन बुजुर्गों ने बहस और परिचर्चाओं में संस्कारों का हमेशा ख्याल रखा। इस लिए यह तरीक़ा हमारे लिए एक मार्गदीप है और यह हमारी ज़िम्मेदारी है कि इसी तरीक़े को अपनाते हुए अपने मतभेद को बरतें और विवादित मुद्दों में दरमियानी राह पर चलें।

6- अगर हालात और परिस्थितियों के बदलाव की वजह से समाज के सामने कुछ समस्याएं पैदा हों और हालत यह हो कि इमामों व मुज्तहिदीन की फ़िक़्ही विभिन्न रायों में से एक पर अलम करने मे कठिनाई

हो और किसी दूसरी राय को अपनाने में यह कठिनाई जाती रहे तो ऐसी स्थिति में उस राय पर फतवा देना जायज़ है जो कठिनाई को दूर करनेवाली हो। लेकिन इस तरह के मामलों में व्यक्तिगत रूप से फतवा देने के बजाए सामूहिक तरीका अपनाना चाहिए।

7- ऐसी समस्याएं जिन में प्रमाणित आलिमों और फ़िक्ह के जानकारों का एक वर्ग अदूल (निर्धारित उसूल से हट कर निर्णय लेना) की ज़रूरत महसूस करे और रूकावट को दूर करने के लिए किसी खास फ़िक्ही राय के अनुसार फ़तवा दे, लेकिन दूसरा वर्ग इसका विरोध करे तो ऐसी स्थिति में आम लोगों के लिए उस राय पर अमल करना जायज़ है जिसमें सहूलत का रास्ता अपनाया गया है। फ़तवा देने वालों के लिए भी उस राय पर फ़तवा देना जायज़ है।

☆☆☆